<LITERATURE><CRITICISM><SNATAK VIJAYENDRA><LEKHAK PRAKASHAK AUR PATHAKYEAR><MADHUMATI (RAJ SAHITYA AKADAMI)><UDAYPUR><22-25><1840><SNATAK V. , LEKHAK AUR PATHAK, CR>

पूरा माहौल व्यवसायिक कारोबार का होगा और इस प्रबन्धात्मक जंजालमें
फंसकरलेखक की मेधी और रचना छटपटाकर सिकुड़ जायेगी। मैं ऐसे अच्छे
साहित्यस्त्रष्टालेखकों को जानता हूं जो प्रकाशक बनने के बाद कोरे कागजों
को खाली पीलीस्याहीसे तो रंगते रहे किन्तु स्वयं साहित्य सृजन से दूर चले
गये। पहले पूंजीवादके खिलाफलिखते थे, प्रकाशक बनने पर पूंजी के पिछलग्गू
बन कर रह गये। पुस्तक व्यवसाय का एक पहलू प्रकाशक और लेखक के पारस्परिक
संबंध काहै जो इस व्यवसाय का सबसे अधिक विवादास्पद एवं विचारणीय बिन्दु
हैं।स्वतन्त्रताप्राप्ति से पहले समूचे देश में एक दर्जन से अधिक हिन्दी
की लब्ध प्रतिष्ठप्रकाशनसंस्थाएं नहीं थी। इनमें से पांच-छः को छोड़कर
अधिकांश पाठ्य पुस्तकोंके प्रकाशनका काम करती थी। पठन रुचि (रीडिंग है-बिट
) का तो अभाव नहीं था किन्तुश्रेष्ठ पुस्तकों का प्रकाशन स्वल्प मात्रा में
होता था। किसी भीश्रेष्ठ साहित्यिककृति का संस्करण दो हजार से अधिक नहीं

होता था और द्वितीय संस्करणकी बातकरना बेईमानी हैं। बड़े-बड़े साहित्यकार
अपनी अमूल्य कृतियों के प्रकाशनार्थभटकतेफिरते थे और एक मुश्त सौ दो
सौ रुपये लेकर या तो पुस्तक बेच देते थे याअपनीपूंजी लगाकर स्वयं पुस्तक
छापकर किसी प्रकाशक या पुस्तक विक्रेताको सौंप देते थे।इस धंधे में घाटे
के सिवा उनके हाथ कुछ नहीं लगता था। उस समय प्रकाशकके मन मेंलेखक के न तो
सम्मान का भाव रहता था और न लेखक की पूंजी ही उन्हें वापसमिलती थी। आज भी
ऐसे प्रकाशन विद्यमान हैं जो पुस्तक के अस्तित्व मेंअपनासहनीय योग समझते
हैं और लेखकों को संरक्षण (पेट्रोनेज) देने का दमभरते हैं। यहबड़ी दयनीय
स्थिति हैं कि साहित्यकार को अपनी कृति के प्रकाशनार्थकिसी कामुखापेक्षी
होना पड़े। अधिकांश छुट भैये प्रकाशक क्षुद्र व्यवसायिकलक्ष्य से इस
कारोबारमें लगे हुए हैं। उन्हें न तो श्रेष्ठ साहित्य से सरोकार हैं और न
साहित्यकारके सम्मानका भाव उनके मन में हैं। लेखक की प्राप्तव्य रायल्टी
देने में भी उन्हेंसंकोच होता हैं।हिसाब-किताब में उलट फेर करना तो उनका
स्वभाव होता हैं। फलतः ऐसे फसलीप्रकाशकों से लेखक अपनी रायल्टी से वंचित
रह जाते हैं। मुद्रित पुस्तकोंकी सहीसंख्या की जानकारी तो स्थापित

प्रकाशक
भी नहीं देते। इस गोपनीयताकी कला मेंउन्हें पकड़पाना तो असंभव
हैं जिनके
पास अपने प्रिटिंग प्रेस है। पाठ्यपुस्तकों में यहधांधली अपनी चरम
सीमा
पर हैं। लेखक की रायल्टी की कोई दर निश्चित नहीं हैं। रायल्टी
की दर का
निर्णयलेखक की प्रतिष्ठा, पुस्तक की विक्रय स्थिति और प्रकाशक की
इच्छापर
निर्भर करताहैं। बीस प्रतिशत से ढ़ाई प्रतिशत की दर रायल्टी दी जा
रही
हैं। रायल्टीकी दरका निर्णय लेखक और प्रकाशक के आपसी
समझौते से होता हैं।
इस सम्बन्धमें हिन्दीप्रकाशक संघ ने अथवा आथर्स गिल्ड ऑफ
इंडिया ने कोई
सर्वसम्मत फार्मूलानहींबनाया हैं। रायल्टी का भुगतान व्यवसायिक
दृष्टि से
नैतिक कर्तव्यहोने के साथसामाजिक दायित्व से भी जुड़ा हैं। रायल्टी
प्राप्त
करने के लिए यदिलेखक को अदालतकी शरण लेनी पड़े तो यह
दोनों पक्षों के लिए
कष्टप्रद होने के साथ शर्मनाकबात हैं। प्रकाशन व्यवसाय को विकृत
करने वाले
प्रकाशक वे हैं जो वास्तव मेंप्रका-शकन होकर छद्म नाम से प्रकाशन
व्यवसाय
में घुसपैठिये हैं। ऐसे छद्म प्रकाशकोंने पुस्तक व्यवसाय में विनिमय
प्रणाली
को जन्म देकर खारिज-कूड़ा-करकटसाहित्यको प्रश्रय देना आरम्भ

कर दिया हैं।
जो पुस्तकें किसी भी कारण से साहित्यजगतसे बहिष्कृत हो जाती हैं उन्हें
वाटर सिस्टम से अदला-बदली द्वाराबेचना-खरीदनापुस्तक व्यवसाय के सामाजिक
पक्ष को दूषित और कमजोर करना हैं। विनिमयप्रणालीसे प्राप्त पुस्तकों की
रायल्टी लेखक को नहीं मिलती उनका कोई हिसाबही नहींहोता। पुस्तक व्यवसाय
में व्याप्त भ्रष्टाचार की सारजियों की विस्तारसे चर्चा करनामैं आवश्यक
नहीं समझता। यदि इस संदर्भ को विवृत किया जाय तो काजल कीकोठरी में घुसने
जैसा होगा। स्मरण रहे कि पुस्तक व्यवसाय में मैंनेजानबूझकरपुस्तक विक्रेता
"बुक सेलर" को पृथक स्थान नहीं दिया हैं। यदि बुकसेलरको प्रका-शकसे पृथक
करके देखा जाय तो उसकी व्यवसायिक स्थिति और अधिक शोचनीय एवंचिन्त्य ठहरती
हैं। वैसे अधिकांश प्रकाशक पुस्तक विक्रेता का दायित्वनिभाते हैं अतःमैं
पुस्तक विक्रेता को प्रकाशक में समाहित करके ही देखता हैं। प्रकाशक व्यवसाय
में सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न पुस्तकों की बिक्रीहैं। सामान्यतःपुस्तक
बिक्री के तीन क्षेत्र हैं। पहला तो व्यक्तिगत रुप से क्रयकरने वाला
पाठक हैंजिसकी संख्या दिनों दिन घटती जा रही हैं। ज्यों-ज्यों पुस्तक की
कीमतबढ़ रही हैंत्यों-त्यों पाठक की क्रय शक्ति घट रही हैं। दूसरा

क्षेत्र
सरकारीअर्ध सरकारी, पुस्तका-लयहैं जिनमें स्कूल, कालेज, और विश्वविद्यालयों
के पुस्तकालय भीहैं। इन पुस्तका-लयोंमें आजकल एक पुस्तक की तीन-चार प्रतियां
भी खरीदनी शुरु हो गई हैं।पुस्तकालयों में पुस्तक क्रय करने के तरीके भ्रष्ट
हो गये हैं। कुछपुस्तकालयों में संस्थाको पन्द्रह-बीस प्रतिशत कमीशन देने
के बाद भ्रष्ट पुस्तकालय भीअपना अनैतिककमीशन लेने लगे हैं।